Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
July to September 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शिवमूर्ति : समकालीन कथा साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर

डॉ. प्रिया सिंह*

* असिस्टेंट प्रोफेसर, करामत हुसैन मुस्लिम गर्ल्स पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

प्रस्तावना – समकालीन हिन्दी साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर माने जाने वाले शिवमूर्ति जी ने अपनी रचनाओं में मजदूरों, स्त्रियों, किसानों, ग्रामीण जनजीवन व दलितों की दयनीय स्थिति, उन पर होने वाले शोषण व अत्याचारों और इन सबके प्रतिकार स्वरूप उत्पन्न विरोध व विद्रोह की आग व जातिवादी विमर्श को बहुत ही प्रभावी एवं प्रमाणिक ढंग से अभिव्यक्त किया है, जिसके माध्यम से हम पाते हैं कि समाज में एक नवजागृति व सामाजिक चेतना का प्रादुर्भाव होता है। शिवमूर्ति ऐसे कथाकार हैं जो समाज के उस यथार्थ को रचते हैं, जहाँ तक दूसरों की दृष्टि कम ही पहुँचती है। यथार्थपरक आख्यान उनकी रचनाओं के कथानक व घटनाक्रम में ही समाहित नहीं होता बल्कि उनकी भाषा, उनके पात्रों के चरित्र, उनके संवाद आदि प्रत्येक स्थान पर दिखाई देता है। शिवमूर्ति के साहित्य में केवल दलितों व पिछड़ों की ही चिन्ता नहीं है न ही केवल दलितों के सरोकारों की बात की गई है, वरन् उनके सरोकार सभी जातियों, समुदायों के गरीबों से जुड़े हुए हैं। वर्गीय चिन्ता तथा नारी विमर्श उनके लेखन में प्रबल रूप में उपस्थित है। उनकी अधिकांश कहानियों के केन्द्रों में स्त्रियाँ ही हैं किन्तु आधुनिकता व उत्तर आधुनिकता के बीच झूलने वाले शहरी वातावरण की तुलना में ग्रामीण परिवेश में जीने वाली गरीब व प्रताड़ित स्त्री की स्थिति उन्हें ज्यादा चिंतित करती है।

भारतीय साहित्य में आधुनिक काल का प्रारम्भ उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से प्रारम्भ होता है, किन्तु सुधार आन्दोलन की दृष्टि से हम आधुनिक काल को अंग्रेजों के आगमन से जोड़कर देखते हैं। वस्तुत: भारत में अंग्रेजों के आगमन के पश्चात् ही दलितों में एक नई चेतना उत्पन्न होती है तथा प्रतिरोध की भावना का विकास होता है। दूसरे शब्दों में कहें तो अंग्रेजी राज्य की स्थापना के साथ ही दलित जीवन की संघर्ष गाथा शुरू हो जाती है। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान भी दलित प्रश्नों को मुखरता से उठाया गया किन्तु स्वतंत्रता मिलने के पश्चात् दलित आन्दोलन की चमक फीकी पड़ने लगती है तथा निरन्तर कमजोर होती जा रही थी। समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में शिवमूर्ति का लेखन पाठकों के लिए एक बड़ी उपलब्धि माना जाता है क्योंकि वे अपने समय के उन सारे सवालों से टकराते हैं जिन्हें स्वाधीन भारत के बड़े सवालों के रूप में जाना जाता है। शिवमूर्ति ने सन् 2004 में अपने उपन्यास 'तर्पण' में दलित–शोषण केन्द्रित लेखन को एक नए मुकाम पर पहुँचा दिया। इनके कथा साहित्य में दलित वर्ग का चित्रण लाचार व निरीह रूप में न होकर शोषण के खिलाफ आवाज उठाने के रूप में हुआ है। 'तर्पण' उपन्यास में रजपतिया के पिता पियारे पण्डित के बेटे चंदर की माँ को चेतावनी देते हुए कहते हैं कि– 'किसी गुमान में मत भूलिए पंडिताइन अब हम ऊ चमार नहीं है कि कान, पूँछ दबाकर सब सह, सुन लेंगे, चिउँटो को गुड़ का मजा लेना मंहगा कर देंगे।'[1]

'तर्पण' उपन्यास में आज के आधुनिक भारत के गाँवों की तस्वीर दिखाई देती है। ऊँची मानी जाने वाली सर्वण जातियों के दिन अब लद गए हैं, उनकी मानसिकता के कारण जातीय संघर्ष अक्सर देखे जाते हैं। शिवमूर्ति जी का मुख्य ध्येय ही दलितों का जातिगत संघर्ष, मोर्चा–बन्दी और शक्ति प्रदर्शन को दर्शाना है। दलित समाज अब सत्य के साथ–साथ न्याय हासिल करने के लिए लड़ रहा है। शिवमूर्ति जी दिखाते हैं किस प्रकार दलितों के नेता भाई जी ने दलितों में एक नई चेतना जाग्रत की है। भाई जी चंदर के खिलाफ बलात्कार की रिपोर्ट लिखने की सलाह देते हैं, लेकिन लोगों द्वारा इसे झूठा करार देने पर वे साफ कहते हैं– 'झूठ नहीं स्ट्रेटजी। कलयुग में केवल सच के भरोसे जीत नहीं हो सकती। वे तो हमेशा ही स्ट्रेटजी के तौर पर झूठ बोलते और जीतते आए हैं। सिर्फ एक झूठ बोलकर कि वे ब्रह्मा के मुँह से पैदा हुए हैं और हम पैर से, वे हजार साल जो हमसे अपना पैर पुजवाते आ रहे हैं। अब एक झूठ बोलने का हमारा दाव आया है तो हमारे गले क्यों अटक रहा है।'[2]

यहाँ दलितों को तेवर रक्षात्मक न होकर पूरी तरह निडर व पराक्रमी है। भारतीय समाज में आज धर्म, जाति और सम्प्रदाय के ठेकेदार लोगों के बीच खाई को लगातार बढ़ाने का कार्य कर रहे हैं। साम्प्रदायिकता और जातिवाद के नाम पर नेता घिनौनी राजनीति करते हैं और इसका परिणाम आम जनता को भुगतना पड़ता है। शिवमूर्ति जी ने अपने उपन्यास 'त्रिशूल' में साम्प्रदायिकता और घोर जातिवादिता को चित्रित किया है। 'त्रिशूल' उपन्यास का पात्र पाले, दलित समाज व दलित अस्मिता का प्रतिनिधित्व करता हुआ कहता है–

अरे, हो, ओ....ओ....ओ.....
छुआछूत और जाति पाति माँ
सगरो मनई जरत मरत है
ऊपर से जब बोलने लागै
लागै मानो फूल झरत हैं।
हा...हा...हो...हो! बहुत सही। बहुत सही।[3]

इसी प्रकार शिवमूर्ति की कहानी 'बनाना रिपब्लिक' में भी जातीय संघर्ष देखा जा सकता है।

समकालीन कथा साहित्य में दलित जीवन के उन सभी पहलुओं का चित्रण मिलता है, जो दलित समाज को मुख्यधारा में लाने के लिए सहायक

सिद्ध हुए। विरोध व विद्रोह का भाव पूरे दलित समाज को सशक्त बनाता है, वे सामंतवादी और ब्राह्मणवादी शक्तियों के एकाधिकार को चुनौती दे रही हैं और परास्त भी कर रही हैं। 'बनाना रिपब्लिक' कहानी में ही शिवमूर्ति जी ने एक ऐसी दलित स्त्री 'फुलझारी' का चित्रण किया है जो अकेले दम पर परधानी का चुनाव लड़ रही है। फुलझारी के दुआर पर सुबह-शाम औरतों का मेला लगता है। किसी को विधवा पेंशन चाहिए, किसी को बुढ़ापा पेंशन। कमर में लाल चुनरी बांधे फुलझरिया बायाँ हाथ कमर पर रखकर दाहिने हाथ को हवा में चमकाती है- 'पदारथ ने तेरह औरतों को विधवा बनाया है। मरद आघत विधवा! उन्हें फर्जी पेंशन दिला रहे हैं और तो और अपनी सगी पतोहू को विधवा दिखा दिया है.....जग्गू और मुन्दर में इतनी हिम्मत है कि ठाकुर बाभन टोले की फर्जी विधवाओं की पेंशन रोक सकें? जीतते ही मैं यह जालबट्टा बन्द कराऊँगी।'[4] शिवमूर्ति की अधिकतर कहानियाँ नायिका प्रधान हैं। 'कसाईबाड़ा', 'अकालदण्ड', तिरिया चरित्तर' आदि कहानियों की स्त्रियों विमली और शनिचरी के साथ समाज, कानून, सरकारी तंत्र का दुर्व्यवहार और ग्रामीण जीवन का कड़वा सत्य सबके सामने प्रस्तुत करते हैं। स्त्री जीवन के प्रत्येक पहलूओं और समस्याओं का चित्रण इन्होंने किया है। साहस, त्याग, करुणा, दृढ़ता और संयम जैसे उच्च मानवीय गुणों के साथ-साथ ईर्ष्या, द्वेष, रुढ़िवादिता, धर्मभीरूता, अन्धविश्वास जैसी कमियों के साथ इनके स्त्री पात्र विद्यमान हैं।

शिवमूर्ति जी स्त्री जीवन के जिस यथार्थ को अपनी कहानियों में चित्रित करते हैं, वह आजादी के बाद के ग्रामीण परिवेश की स्त्रियाँ हैं। अब तक हम देखते हैं कि हिन्दी साहित्य में महिला कथाकारों का एक वर्ग उभर चुका था जो स्त्री के सामाजिक, आर्थिक व निजी जीवन को कहानी का आधार बना रही थीं। 'स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् नारी घर से बाहर आकर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्रों में भाग लेने के बाद भी परम्परागत संस्कारों से पूर्णतया अलग नहीं हो पाई है। भारत की सामाजिक व्यवस्था में आए परिवर्तनों ने नारी के व्यक्तित्व के विकास में कतिपय आधार तो बदले किन्तु पारिवारिक दृष्टि से नारी आज भी परिवार का केन्द्र बिन्दु है और पुरुष परिवार का अधिकारी।'[5] शिवमूर्ति 'सत्ता की संस्कृति' की क्रूरता को भी दर्शाते हैं जहाँ पुरुषवादी मानसिकता अपने विरोधियों को चुप कराने के लिए हत्या तक करवा देती है, शिवमूर्ति अपनी कहानियों के माध्यम से इस क्रूर संस्कृति के विरुद्ध खड़े दिखाई देते हैं। इन्होंने स्त्री संघर्ष को अपनी कहानियों में हमेशा आगे रखा है। गाँव के सामान्य किसान परिवार की नवविवाहिता बहू जो विधवा है, 'कुच्ची का कानून' कहानी की नायिका है। शिवमूर्ति जी ने यहाँ स्त्री पात्र को बिल्कुल अलग तरीके से गढ़ा है। वह अपने अधिकारों की रक्षा के लिए कृतसंकल्प है। अपने तर्कशील विचारों एवं बातों से अपने अधिकारों को जीत लेती है। शिवमूर्ति जी ने गाँव के सामाजिक यथार्थ को चित्रित करते हुए एक स्त्री को संघर्ष करने वाली नेत्री के रूप में प्रस्तुत किया है। वरिष्ठ आलोचक विरेन्द्र मोहन लिखते हैं- 'शिवमूर्ति की कहानियों में संयुक्त परिवार और संयुक्त परिवार के विघटन तथा उससे उत्पन्न कारकों की पहचान मिलती है। 'भरतनाट्यम', 'सिरी उपमा जोग' तथा 'केशर कस्तूरी' में पारिवारिक विघटन के कमजोर पक्ष को और अधिक कमजोर बना देता है। लेखक ने संयुक्त परिवार और विघटित परिवार में आर्थिक आधार और उससे उत्पन्न सम्बन्धों को पहचाना है। शिवमूर्ति की प्राय: सभी कहानियों में यह केन्द्रीय विचार है।'[6]

शिवमूर्ति अपनी कहानियों में संयुक्त परिवार के टूटन, बिखराव व आर्थिक पक्ष को उजागर करते हैं। संयुक्त परिवार की समस्याओं को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करते हैं। इनकी कहानी 'केशर कस्तुरी' की 'केशर' ऐसी पात्र है जो अभावों में जीवन काटते हुए भी आत्मसम्मान से जीना चाहती है। दलित समाज में प्रतिभा की कमी नहीं है, केवल अवसर की आवश्यकता है। स्त्री चाहे किसी भी समाज की हो उसे बराबरी व सम्मान से जीने का अधिकार है। दलित स्त्रियों के प्रति सवर्ण मानसिकता के लोग गन्दे विचार पाले रखते हैं। 'केशर' इसका खुलकर विरोध करती है।

जब हम एक किसान की बात करते हैं तो केवल पुरुष ही नहीं स्त्रियाँ भी उस दायरे में आती हैं। वर्तमान समय में कृषि कार्य अधिकांशत: स्त्रियों ने सम्भाल रखा है। पुरुष आर्थिक स्थिति को मजबूत करने की लालसा में शहर पलायन कर रहे हैं ऐसे में कृषि कार्य का भार स्त्रियों के जिम्मे आ जाता है। शिवमूर्ति जी इन्हीं किसान स्त्रियों की चर्चा अपने कथा साहित्य में करते हैं। साहित्य के माध्यम से किसान स्त्रियों के दु:ख दर्द को समाज के सम्मुख लाने का प्रयत्न करते हैं। इन्होंने किसान स्त्रियों के संघर्षमय जीवन को यथार्थ रूप प्रदान किया है- 'अर्द्धरात्रि। सघन अन्धकार। बूढ़ी आँखों में नींद नहीं। सहसा लगा, कोई टाटी खुटकाते हुए पुकार रहा है, 'काकी, काकी रे!' उसने उठकर टाटी का बेंड़ा खोला तो सुगनी हांफते हुए उसके गले से लिपट गई काकी रे, हमारी जिनगी माटी हो गई।'[7]

शिवमूर्ति अवध क्षेत्र के जमीन से जुड़े हुए कथाकार हैं। इनकी लगभग नौ-दस कहानियाँ हैं, जो विशिष्ट पहचान बनाती हैं। कम लिखकर अधिक ख्याति प्राप्त करते हैं शिवमूर्ति। इनकी कहानियाँ पाठक वर्ग को आकर्षित करने के साथ-साथ कई बहसों को भी जन्म देती हैं। शिवमूर्ति महान कथाकर प्रेमचन्द के बाद गाँव, गरीबी, स्त्री, दलित और कृषक जीवन का यथार्थ चित्रण करते हैं। इनका व्यक्तित्व व कृतित्व तथा इनका साहित्य लेखन वर्तमान समय में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तर्पण, शिवमूर्ति, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, संस्करण-2010, पृ0 14
2. वही, पृ0 25
3. त्रिशूल, शिवमूर्ति, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, संस्करण-2012, पृ0 56
4. कुच्ची का कानून (कहानी संग्रह), शिवमूर्ति, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, संस्करण-2017, पृ0 63
5. लमही, ऋत्विक राय, अक्टूबर-सितम्बर 2012, पृ0 6
6. केशर कस्तूरी (कहानी संग्रह), शिवमूर्ति, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, संस्करण-2014, पृ0 27
7. लमही, ऋत्विक राय, अक्टूबर-सितम्बर 2012, पृ0 18

****